टिप्पणी

18

संविधानवाद एवं प्रस्तावना

संविधान देश के शासन को आधार प्रदान करता है। संविधान उस राज्य के कानूनों तथा नियमों द्वारा शासित करता है। कोई भी सरकार, जो संविधान के द्वारा नियमित एवं नियंत्रित होती है 'संवैधानिक सरकार' कहलाती है। 'संविधानवाद' से अभिप्राय है, संवैधानिक सरकार तथा संवैधानिक सिद्धान्तों में आस्था रखना।

भारत का संविधान 'प्रस्तावना' से प्रारंभ होता है। प्रस्तावना में संविधान के आदर्श, उद्देश्य तथा मौलिक नियम के अन्तर्निहित अथवा समाहित हैं। संविधान की प्रस्तावना ने, देश के भाग्य को निश्चित, समुचित तथा व्यवस्थित आकार देने में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संविधान के प्रावधानों की व्याख्या करने में प्रस्तावना की मार्गदर्शक के रूप में भूमिका महत्वपूर्ण है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के पश्चात् आप :

- 'संविधानवाद' शब्द का अर्थ समझ जाएंगे;
- संविधान की देश के मौलिक कानून के रूप में महत्व को पहचान सकेंगे;
- संविधान की 'प्रस्तावना', इसके संघटक एवं इसकी की प्रासंगिकता का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रस्तावना के मौलिक नियमों तथा संवैधानिक प्रावधानों में इसके प्रभाव की पहचान कर सकेंगे;
- इस तथ्य को जान सकेंगे कि क्या प्रस्तावना संविधान का अंग है या नहीं;
- प्रस्तावना की भूमिका को समझ कर उसका विश्लेषण कर सकेंगे; तथा
- प्रस्तावना के व्याख्यात्मक महत्व की पहचान कर सकेंगे।

18.1 संविधानवाद

जो प्रलेख या दस्तावेज कानूनों तथा नियमों को अंतर्विष्ट या समाहित करते हुए सरकार के स्वरूप को निर्धारित करने के साथ-साथ नागरिकों एवं सरकार के बीच संबंध भी निश्चित करता है, उसे संविधान कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, संविधान एक ऐसा दस्तावेज होता है, जिसके दो प्रमुख पहलू होते हैं अर्थात् विभिन्न अंगों के पारस्परिक संबंध तथा सरकार के विभिन्न स्तरों

के साथ सरकार और नागरिकों के बीच संबंध। किसी भी राज्य का संविधान वहां के शासन को आधार प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, संविधान में देश का शासन चलाने का मौलिक आधार अथवा मौलिक कानूनों एवं कानून या विधि का शासन समाहित होते हैं। संक्षेप में, संविधान कानून और नियमों के अनुरूप राज्य शासित होता है। यही नहीं, कोई भी सरकार जो संविधान द्वारा शासित अथवा सीमित होता है, वह संवैधानिक सरकार कहलाती है।

संविधानवाद से अभिप्राय संवैधानिक सरकार अथवा संवैधानिक नियमों में आस्था और विश्वास रखना है। यह कहना उचित है कि संविधानवाद के अंतर्गत एक संवैधानिक सरकार एक लिखित संविधान द्वारा शासित एवं नियंत्रित होती है। न्यायिक व्यवस्था का विकास संविधानवाद की वृद्धि से जुड़ा है।

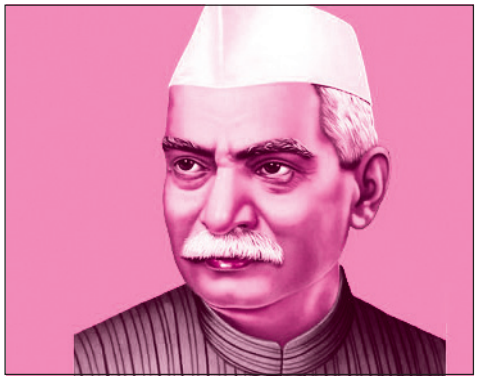

चित्र 18.1: डॉ. राजेंद्र प्रसाद, सभापति, संविधान सभा

चित्र 18.2: डॉ. भीमराव अंबेडकर, अध्यक्ष, प्रारूप समिति

पाठगत प्रश्न 18.1

1. संक्षेप में संविधान के अर्थ का वर्णन कीजिए।
2. 'संविधानवाद' शब्द से क्या अभिप्राय है?

18.2 संविधान की प्रस्तावना

भारत के संविधान का प्रारंभ प्रस्तावना से होता है। प्रस्तावना में संविधान के आदर्शों, उद्देश्यों तथा मौलिक नियमों का उल्लेख किया गया है। प्रस्तावना किसी पुस्तक की भूमिका जैसी है। प्रस्तावना को संविधान की मार्गदर्शिका भी कहा जाता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना इस प्रकार है :

> ''हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण, प्रभुत्वसंपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को : सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय; विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था व उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता एवं अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तिथि 26 नवंबर, 1949 ई. को एतद् इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

'प्रस्तावना' संक्षेप में, संविधान के उद्देश्यों को दो प्रकार से वर्णित करता है; प्रथम, प्रशासन की संरचना से संबंधित तथा दूसरे, स्वतंत्र भारत द्वारा प्राप्त किए जाने वाले आदर्शों से संबंधित हैं। संभवत: इसीलिए प्रस्तावना को संविधान की कुंजी कहकर पुकारा जाता है।

'प्रस्तावना' में दिए गए उद्देश्यों का अंतर्विष्ट संविधान की मौलिक संरचना में संशोधन अथवा सुधार लाना सरल नहीं है, क्योंकि संविधान में अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संशोधन प्रक्रिया सरल के साथ ही साथ कठिन भी है।

सर्वोच्च न्यायालय के निम्न न्यायिक-निर्णयों का संबंध संविधान की मौलिक संरचना से सम्बन्धित है।

1. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य, ए.आई.आर. 1973 एस.सी. 1461।

2. इंदिरा गांधी बनाम राजनारायण, ए.आई.आर. 1975 एस.सी. 2299।

3. मिनर्वा मिल्स लिमिटेड बनाम यूनियन ऑफ इंडिया ए.आई.आर एस.सी. 1989।

4. संदर्भ बेरुबारी यूनियन (1), (1960) 3 एस.सी.आर. 250।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में मात्र एक संशोधन, 42वें संविधान संशोधन 1976 में ही हुआ था। यह एक ध्यान देने योग्य तथ्य है कि केशवानंद भारती मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में कहा था कि प्रस्तावना भारत के संविधान की मौलिक संरचना का अंग है। यही नहीं, उसी सर्वोच्च न्यायालय ने एक अन्य प्रसिद्ध बेरुबारी मुकदमे में कहा कि प्रस्तावना संविधान की मौलिक संरचना का अंग नहीं है।

'प्रस्तावना के संघटक या घटक : संविधान की प्रस्तावना के निम्न चार घटक हैं:

1. संविधान की सत्ता का स्त्रोत : यह (प्रस्तावना) घोषित करती है कि संविधान की सत्ता का स्त्रोत भारत के लोग हैं।

2. राज्य का स्वरूप : यह (प्रस्तावना) भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित करती है।

3. संविधान के उद्देश्य : यह (प्रस्तावना) न्याय, स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुता को प्राप्त करने को संविधान के उद्देश्यों के रूप में उल्लेखित करती है।

4. संविधान को अंगीकृत करने की तिथि : यह (प्रस्तावना) 26 नवम्बर, 1949 को संविधान को अंगीकृत करने की तिथि घोषित करती है।

पाठगत प्रश्न 18.2

रिक्त स्थानों को भरिए :

1. 'प्रस्तावना' में संविधान की ..... का उल्लेख किया गया है।

2. 'प्रस्तावना' संविधान के ..... को वर्णित करती है।

3. 'प्रस्तावना' के किसी एक संघटक या घटक का नाम बताइए।

टिप्पणी

18.3 प्रस्तावना : क्या यह संविधान का अंग है?

यह एक रुचिकर बात है कि संविधान का आरंभ प्रस्तावना से होता है, जबकि यह सबसे पहले अस्तित्व में नहीं आया। प्रस्तावना संबंधी प्रस्ताव 17 अक्टूबर, 1949 को प्रस्तुत किया गया था। प्रारूप समिति के अध्यक्ष ने प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'प्रस्तावना संविधान का महत्वूर्ण अंग है।' यह प्रस्ताव 2 नवंबर, 1949 को स्वीकार कर लिया गया तथा संविधान का भाग बन गया।

यह विवादास्पद प्रश्न है कि क्या प्रस्तावना संविधान का अंग है अथवा नहीं, संविधान के दो महत्वपूर्ण मुकदमों में वर्णित किया गया था- (क) बेरुबारी तथा (ख) केशवानंद भारती मुकदमा वाद।

उपरोक्त वर्णित मुख्य प्रश्न, कि क्या प्रस्तावना संविधान का अंग है, इस प्रस्ताव पर निर्भर करेगा कि क्या प्रस्तावना को संशोधित किया जा सकता है?

18.3.1 प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है

भारत के संविधान के अनुच्छेद 143(1) के अंतर्गत बेरुबारी मुकदमे में भारत-पाकिस्तान समझौते के प्रसंग के अंतर्गत आठ न्यायाधीशों की पीठ की अध्यक्षता मुख्य न्यायाधीश बी.पी. सिन्हा ने की, जिसने इस विषय पर विचार किया। न्यायाधीश गजेंद्र गडकर ने सर्व-सम्मति की घोषणा कर दी। न्यायालय ने निर्णय में कहा कि संविधान की प्रस्तावना नि:संदेह संविधान निर्माताओं ने विभिन्न प्रावधानों से परिलक्षित कर दिया कि प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है। बेरुबारी मुकदमें को संक्षिप्त रूप देते हुए न्यायाधीश शीलट तथा न्यायाधीश ग्रोवर ने केशवानंद मुकदमें के अंतर्गत (पैराग्राफ 534 को देखिए) निम्न प्रकार से की :

1. संविधान की प्रस्तावना, संविधान निर्माताओं के दिमाग को खोलने की कुँजी हैं, इससे संविधान में शामिल विभिन्न प्रावधानों को स्पष्ट किया जा सके।
2. प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है।
3. यह संविधान के प्रावधानों के द्वारा सरकार को दी गई शक्तियां का स्रोत नहीं हैं।
4. इस प्रकार की शक्तियां, संविधान में समाविष्ट एवं अंतर्निहित प्रदान कर की गयी हैं।
5. शक्तियों के संबंध में जो सत्य है, वही निषेध, सीमांकन व नियंत्रण के विषय में भी सत्य होता है।
6. संविधान की प्रस्तावना का पहला भाग सम्प्रभुत्ता की अवधारणा को सीमित करता है जब वह सम्प्रभु शक्ति का प्रयोग कर किसी अन्तराष्ट्रीय संधि के द्वारा भारत के किसी भूभाग को सत्तंतरित करने पर रोक लगाता है।

बेरुबारी मामला, गोलकनाथ मुकदमें पर आधारित रहा। न्यायाधीश वॉनचू के अनुसार : हम कई समान तर्कों के आधार पर यह विचार रखते हैं कि प्रस्तावना अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन को किसी भी प्रकार से निषिद्ध या नियंत्रित नहीं करती है।

न्यायमूर्ति वच्छावत का विचार था कि ''प्रस्तावना संविधान के अनुच्छेदों की अस्पष्ट भाषा को नियंत्रित नहीं कर सकती।

18.3.2 प्रस्तावना संविधान का अंग है-

यह दुख के साथ-साथ रिकार्ड रखने का विषय है कि बेरुबरी वाद में जाने-माने न्यायाधीशों ने संवैधानिक इतिहास को नजरअंदाज किया। संविधान सभा द्वारा अपनाए गए प्रस्ताव में अनेक शब्दों में कहा गया कि प्रस्तावना संविधान का ही अंग है। यह गलती केशवानंद वाद में सुधारी गई, जिसमें स्पष्ट किया गया कि प्रस्तावना संविधान के अन्य प्रावधानों की तरह ही संविधान का हिस्सा है। इस प्रकार केशवानंद भारती वाद ने इतिहास रचा।

केशवानंद भारती वाद में तेरह न्यायाधीशों की बैंच में से कुछ न्यायाधीशों के क्या विचार थे यह जानना बड़ा रुचिकर है कि पहली बार 13 न्यायाधीशों की पीठ प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत एक रिट याचिका की सुनवाई के लिए बैठी। 13 न्यायाधीशों में से 11 ने अलग राय व्यक्त की। केशवानंद भारती वाद में न्यायालय की राय का अनुपात का पता लगाना आसान कार्य नहीं है, लेकिन प्रस्तावना के उद्देश्य से आसानी से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि केशवानंद भारती वाद पर निर्णय इस पक्ष में था कि (क) संविधान की प्रस्तावना संविधान का अंग है, (ख) प्रस्तावना न तो शक्ति का स्रोत है, न सीमित या निषिद्ध का स्रोत है, (ग) संविधान के ऐसे प्रावधानों की व्याख्या करने में प्रस्तावना का अत्यधिक महत्व है, जिनमें प्रावधान की वृहद् और गहरी पहुंच को समझना हो या किसी प्रावधान में अस्पष्टता हो! ऐसे प्रावधानों में अर्थ के प्रस्तावना पर निर्भर रहा जा सकता है। जिन प्रावधानों का अर्थ व भाषा स्पष्ट है, उनकी व्याख्या के लिए प्रस्तावना पर निर्भर नहीं रहा जा सकता।

केशवानंद भारती वाद न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूड़ द्वारा एक रुचिकर तर्क दिया गया, उनका कहना था कि प्रस्तावना संविधान का अंग है, लेकिन यह संविधान का प्रावधान नहीं है, इसलिए प्रस्तावना को बदलने के लिए आप संविधान में संशोधन नहीं कर सकते। न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने माना कि यह विचार स्वीकार नहीं किया जा सकता कि प्रस्तावना संविधान का भाग नहीं है। यह संविधान का हिस्सा है तथा यह अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन की परिधि से बाहर नहीं है। संविधान सभा के अभिलेख इस तरह के विवाद के लिए कोई जगह नहीं छोड़ते। यह संविधान सभा की कार्यवाही से सर्वविदित है कि प्रस्तावना को मतदान के पश्चात् संविधान के अंग के रूप में स्वीकार किया गया था।

प्रस्तावना प्रकाश पुंज की भांति इतिहास का एक उद्दीप्त विचार व अवधारणा है, इसलिए तर्क दिया जाता है कि वर्तमान और भविष्य में कितना भी शक्तिशाली शासक क्यों न हो, वह ऐतिहासिक तथ्यों में संशोधन नहीं कर सकता। यद्यपि इतिहास के तथ्यों में संशोधन नहीं किया जा सकता, परंतु प्रस्तावना में संशोधन किया जा सकता है।

केशवानंद भारती वाद भारत के संवैधानिक इतिहास में एक मील का पत्थर होने के साथ-साथ एक महत्वपूर्ण मोड़ भी था। महत्वपूर्ण संवैधानिक विषय पर न्यायिक निर्णय में इस वाद से आया बदलाव संवैधानिक कानून के छात्रों के लिए आश्चर्यजनक व अत्यधिक रुचिकर है। प्रत्येक न्यायाधीश द्वारा अपनी राय उत्कृष्ट व मनपसंद शब्दों में व्यक्त की गई, जिनमें हमारे संविधान निर्माताओं की 'हम भारत के लोग' की भावना व्यक्त होती है।

न्यायमूर्ति डी.जी. पालेकर ने कहा कि प्रस्तावना संविधान का अंग है, इसलिए यह अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संशोधन योग्य है। उन्होंने कहा कि मौलिक अधिकारों को प्रस्तावना का विस्तार मानना अतिशयोक्ति व आधा सत्य है। न्यायमूर्ति एच.आर. खन्ना की राय में प्रस्तावना संविधान

टिप्पणी

का अंग है। उन्होंने प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा का विकास कर इसे प्रस्तावना में प्रतिस्थापित स्वतंत्रता, समानता और लोकतंत्र के मूल्य से संबद्ध किया। उन्होंने कहा कि ये अधिकार अहस्तांतरणीय है, इसीलिए इनमें संशोधन नहीं किया जा सकता, क्योंकि इन अधिकारों व मूल्यों को मनुष्य ने युगों के संघर्ष से संजोए रखा है।

न्यायमूर्ति खन्ना ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया, जो कहता था कि प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है। उनके अनुसार, 'प्रस्तावना संविधान से पहले चलती है।' उनकी राय में प्रस्तावना भी अन्य प्रावधानों की तरह ही संविधान का अभिन्न हिस्सा है, इसलिए आधारभूत ढांचे को छोड़कर इसमें संविधान के अन्य प्रावधानों की तरह प्रस्तावना में भी संशोधन किया जा सकता है। आधारभूति या मूलभूत ढांचे को संशोधन की शक्ति पर प्रतिबंधक के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए।

न्यायमूर्ति एस.एन. द्विवेदी ने भी न्यायमूर्ति ए.एन. रे के निष्कर्ष व निर्णय के समान ही अपने विचार रखे, जिसने कहा था कि प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है। न्यायमूर्ति द्विवेदी ने प्रस्तावना को संविधान का अंग बताने के साथ-साथ इसे संविधान का प्रावधान भी घोषित किया।

निष्कर्ष में न्यायमूर्ति बेग ने कहा कि अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन की शक्ति पर कोई नियंत्रण नहीं है।

पाठगत प्रश्न 18.3

रिक्त स्थानों की पूर्ति करो-

1. ..... वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने राय व्यक्त की कि प्रस्तावना संविधान के आधारभूत ढांचे में शामिल है।

2. ..... वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने राय व्यक्त की कि प्रस्तावना संविधान के आधारभूत ढांचे में शामिल नहीं है।

3. 'प्रस्तावना संविधान का अंग है' क्या आप इस कथन से सहमत है, यदि हां तो अपने उत्तर के पक्ष में प्रासंगिक वाद बताइए।

18.4 प्रस्तावना की भूमिका

संविधान की प्रस्तावना पर निम्न प्रकार से चर्चा की जा सकती है :

1. प्रस्तावना की भूमिका और

2. प्रस्तावना का व्याख्या में महत्व या प्रस्तावना का व्याखिक मूल्य।

प्रस्तावना के व्याखिक मूल्य का तीन आयामों में अध्ययन किया जा सकता है -

(क) प्रस्तावना संविधान के व्याख्या कर्ता के रूप में।

(ख) संविधान के अंतर्गत निर्मित अन्य कानूनों की व्याख्या के स्रोत के रूप में प्रस्तावना।

(ग) अंतर्राष्ट्रीय दस्तावेज/ संधियां/ सम्मेलन/ घोषणाएं प्रस्तावना की व्याख्या में सहायक के रूप में

संविधान की प्रस्तावना ने देश का भाग्य व नियति का परिणाम निधार्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जब भी लोकतंत्र के कदम प्रस्तावना द्वारा तय दिशा में चले, वे उचित दिशा में थे, उससे विचलन विपधगमन था।

भारत के संविधान के मेहराब के गर्भ में प्रस्तावना, भाग-III के अंतर्गत मौलिक अधिकार और भाग-IV में वर्णित राज्य के नीति-निदेशक तत्व है, जिनके माध्यम से प्रत्येक नागरिक के लिए विधि के अंतर्गत समतावादी-समाज व्यवस्था तथा मौलिक स्वतंत्रताएं और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रताएं सुनिश्चित होती है। समाज में उपस्थित असमानताओं को दूर कर विधि के शासन के अंतर्गत सकारात्मक विभेद के साथ जाति, पंथ, लिंग, धर्म और क्षेत्र के संदर्भ में समानता प्रदान करना।

जबकि न्यायमूर्ति शीलट और न्यायमूर्ति ग्रोवर की केशवानंद भारती वाद में राय थी कि प्रस्तावना की ड्रॉफ्टिंग और इसकी स्वीकृति दर्शाती है कि;

1. यह संविधान की अग्रगामी नहीं है, जैसा कि अमेरिकी संविधान की प्रस्तावना के विषय में कहा जाता है।
2. इसे संविधान के अंग के रूप में स्वीकार किया गया।
3. इसमें शामिल ज्यादातर सिद्धांत उद्देश्य संबंधी प्रस्ताव से लिए गए।
4. प्रारूप समिति मानती थी कि उन्हें नए राज्य की सभी महत्वपूर्ण विशेषताएं इसमें शामिल करनी चाहिए।
5. इसमें यह मूल अवधारणा शामिल है कि संप्रभुता का अंतिम स्रोत जनता है।

यहां पर एक रुचिकर प्रश्न उठता है कि क्या प्रस्तावना में संशोधन किया जा सकता है? क्या प्रस्तावना अनुच्छेद 368 के अंतर्गत संविधान संशोधन की शक्ति पर नियंत्रण लगाती है?

प्रस्तावना का महत्व इस बात में है कि इसमें हमारे संविधान के मूल सिद्धांत समाहित है। क्या अनुच्छेद 368 की संविधान संशोधन की शक्ति को पूरी तरह बेअसर कर दिया जाए या फिर जिस आधारभूत सिद्धांत, जिस पर संवैधानिक ढांचा खड़ा किया गया है, उसे कमजोर कर दिया जाए। भारत के लोगों ने अपने देश को संप्रभुता संपन्न लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए प्रतिबंद्धता व्यक्त की।

कोई यह नहीं कह सकता कि ये सिद्धांत अस्पष्ट है, उनका महत्व व संकेत इतनी अच्छी तरह समझ में आता है कि अस्पष्टता का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। प्रश्न यह उठता है कि क्या अनुच्छेद 368 में वर्णित संशोधन और संशोधित शब्द का यह अर्थ लगाया जाना चाहिए कि हम इन तीन मूल सिद्धांतों- संप्रभुता, लोकतंत्र व गणराज्य में से किसी को समाप्त कर सकते हैं! और क्या निर्वाचित सरकार संविधान द्वारा बनाई गई लोकतांत्रिक संस्थाओं को अलोकतांत्रिक बना सकती है। यह किसी राज्य पद में ऐसा बदलाव कर सकती है, जो गणराज्य के सिद्धांत के विरुद्ध हो। क्या भारत राज्य के संबंध में संवैधानिक व्यवस्था, संप्रभुता, लोकतंत्र व गणराज्य सिद्धांतों को समाप्त कर बनाई जा सकती है?

विद्वान् न्यायाधीशों ने इस संबंध में राय व्यक्त की कि विशेष परिस्थितियों में प्रस्तावना में बदलाव, फेर-बदल और संशोधन किया जा सकता है, लेकिन इस बात की संविधान निर्माताओं ने कल्पना भी नहीं की कि प्रस्तावना को निरस्त या समाप्त भी किया जा सकेगा। न्यायमूर्ति ए. एन. रे ने अपनी जो राय दी, वह प्रस्तावना के संबंध में काफी सटीक नजर आती है, जिसने कान बनाया वह सुनेगा नहीं और जिसने आंख लगाई वह देखेगा नहीं'। उन्होंने सहमति व्यक्त की कि प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग है, जिसमें उन्होंने संविधान सभा द्वारा पारित प्रस्ताव का उल्लेख किया कि ''प्रस्तावना संविधान का हिस्सा है और प्रस्तावना को समाप्त या रद्द भी किया जा सकता है।''

प्रस्तावना में उस स्थिति में अत्यधिक महत्व है, जहां पर संविधान किसी कानूनी भाग में संदेह या अस्पष्टता हो। यदि अधिनियमित शब्द स्पष्ट है तो व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं होती। इससे स्पष्ट है कि प्रस्तावना सामान्य निर्वाचित सरकार से ज्यादा शक्तिशाली व असरकारक नहीं हो सकती। प्रस्तावना संविधान द्वारा प्रदान की गई शक्तियों की प्रकृति का प्रतिपादन कर सकती है, लेकिन यह शक्तियों का सृजन नहीं कर सकती।

प्रस्तावना का संविधान निर्माण के समय एक विशिष्ट रूप-रेखा तैयार करने में अत्यधिक महत्व हो सकता है, लेकिन जब संविधान ही लगातार बदलता रहता है तो स्थिति बदल जाती है।

प्रस्तावना अधिनियमित भाग में प्रदान की गई शक्तियों का विस्तार या उन्हें सीमित नहीं कर सकती।

न्यायविदों व न्यायिक निर्णयों की यह राय रही है कि संविधान की प्रस्तावना एक औपचारिक प्रारूप मात्र नहीं है, बल्कि यह एक ऐतिहासिक दस्तावेज है तथा फिर भी यह संविधान का हिस्सा है। यह संविधान की व्याख्या करने का स्रोत तथा विधि के शासन की स्थापना का आधार है। यह राष्ट्र के भाग्य के निर्धारण में मार्गदर्शन करता है। इस प्रकार यह न्यायिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रसिद्ध संविधानिक न्यायविद्व दुर्गा दास वसु के अनुसार बोम्बई में न्यायधीशों की पीठ में बहुमत ने प्रस्तावना निम्न नई उपयोगिता स्थापित की।

I. प्रस्तावना संविधान के मूल ढांचे की आरे संकेत करती है।

II. अनुच्छेद 356(1) के अन्तर्गत कोई भी घोषणा संविधान के मूल ढांचे का उल्लंघन करने के आधार पर न्यायिक पुनरावलोकन के लिए खुली है।

III. इसका अभिप्राय है कि अनुच्छेद 356(1) के अन्तर्गत कोई भी घोषणा, जो मूल ढांचे का उल्लंघन करती है, जैसा कि संविधान की प्रस्तावना में संक्षेप में कहा गया है, को असंवैधानिक घोषित किया जा सकता है।

प्रस्तावना की भूमिका पर बहस इन्द्रा साहनी बनाम भारत का संघ केस का सन्दर्भ लिए बिना पूरी नहीं हो सकती। इस केस को आम तौर पर मण्डल कमीशन केस के नाम से जाना जाता है जिसका निर्णय नौ न्यायाधीशों की पीठ ने किया था। इसके कारण न्यायिक विचारों की बहुरंग प्रस्तुति देखी जा सकती है जो प्रस्तावना का महत्व तथा सन्देश दर्शाते हैं। न्यायधीश एस. रातनवेल पाण्डियन का विचार है-

> अवसरों और प्रतिष्ठा की समानता हमारे जीवन्त संविधान में लिखे गए उज्जवल निर्देश है जो हमारे संप्रभु, समाजवादी और पंथ निरपेक्ष लोकतान्त्रिक गणतन्त्र के उद्देश्यों में से एक को दर्शाता है।

प्रस्तावना में कहे गए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में न्याय के समान वितरण से सम्बन्धित अनेक संवैधानिक प्रावधानों को त्रिपक्षीय विवेचना की आवश्यकता है जो सामाजिक न्याय, आर्थिक न्याय तथा राजनीतिक न्याय प्राप्त करने के लिए मौलिक अधिकारों में अन्तर्निहित अपेक्षाओं से भरी तीव्रता और सुन्दरता से प्रतिबिम्बित होनी चाहिए। यह बदलती हुई सामाजिक जरूरतों को स्वीकार करना है। किसी को भी संविधान को एक तलवार अथवा एक अपराध अथवा पूर्वभासी रक्षा के लिए कवच के रूप में प्रयोग करने की अनुभूति नहीं दी जा सकती। संविधान की ऐसी कोई भी व्याख्या स्वीकार नहीं की जा सकती जो लोगों के किसी वर्ग के साथ स्थायी अन्याय और असमानता पैदा करती है अथवा संवैधानिक लाभों पर वंशीय एकाधिकार का अनैतिक दावा करने वालों की रक्षा करती है। संवैधानिक आदेश के रूप एक उन्नत सामाजिक नीति को ऊँची मीनारों में बैठ कर, चुप्पी साध कर तथा समाज को प्रभावित करने वाले दबावों और तूफानों को नजरान्दाज तथा अवहेलना करके नहीं अपनाया जा सकता।

न्यायमूर्ति टी. के. थम्मन के न्यायिक निर्णय पर मानवीय संवेदानएं हावी थी। उसने कहा था कि ऊँचे-ऊँचे भवनों से झलकने वाली अमीरी के साथ ही केवल भीख पर जिन्दा रहने वाले और बहुत मामलों में कोढ़ जैसी बीमारियों से प्रभावित और विकृत तथा गरीबी के अभिशाप से घिरे फुटपाथों और शहर की गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग अर्थात असली भारत की दुर्दशा, कष्टों और अपमान में धर्म, जाति और वंश की बाधाएं आड़े नहीं आती। पिछड़ेपन के ये जीवन्त स्मारक, हमारी राष्ट्रीय उदासीनता का शर्मनाक स्मरण संविधान की प्रस्तावना में उद्घोषित आदर्शों के साथ एक क्रूर धोखा है।

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह जाति व्यवस्था पर प्रहार करते हैं जो संविधान निर्माताओं द्वारा दफना दिए जाने के बावजूद विभिन्न रूपों में अपना बदसूरत चेहरा दिखती रहती है और देश की पंथ निरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता के लिए गम्भीर खतरा प्रस्तुत करती है। वह इतिहास से सबक न लेने वालों को चेतावनी देता है कि उन्हें दोबारा मुसीवतों का सामना करना पड़ेगा। भातर के लोगों के लिए संविधान के शब्दों और भावना को मानना अति महत्वपूर्ण है जिसने हमारे देश को संप्रभु, समाजवादी, पंथ निरपेष, लोकतान्त्रिक गणराज्य का रूप दिया है जो अपनी प्रस्तावना में सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा स्तर और अवसरों की समानता देने का वायदा करता है।

न्यायमूर्ति पी. बी. सांवत अपनी मान्यता दर्ज करते हैं कि जब तक सबके लिए अवसरों की समानता को सुनिश्चित नहीं किया जाता तब तक संविधान की प्रस्तावना में दर्ज किए गए लक्ष्य अर्थात ऐसा भाई चारा जो व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता के प्रति आश्वस्त करे, को प्राप्त नहीं किया जा सकता। असमानता भाईचारे के विरूद्ध है और भाईचारे के बिना एकता एक सपना मात्र रह जाएगा। जब तक सब को आर्थिक न्याय प्रत्याभूत नहीं किया जाता तब तक संविधान द्वारा दिए गए सामाजिक और राजनीतिक न्याय केवल एक धोखा ही रहेंगे। प्राईवेट अथवा सार्वजनिक रोजगार को सुरक्षित करना सामाजिक बराबरी का साधन है। ऐसा रोजगार उनके लिए सुरक्षित होना जिन्हें अतीत में इससे वंचित किया गया ताकि इससे वंचितों को प्रस्तावना द्वारा घोषित सामाजिक और आर्थिक न्याय प्राप्त हो सके।

न्यायमूर्ति आर. एम. सहाय के विचार में संविधान की प्रस्तावना इतिहास का एक परिवर्तन बिन्दु है। हमारा संविधान अतीत से नाता तोड़कर एक नई दृष्टि की आवश्यकता के साथ निर्मित किया गया था। संविधान की प्रस्तावना सदियों तक विदेशी शासन से त्रस्त लोगों की भावनाओं को

टिप्पणी

अभिव्यक्त करता है। उसने कहा था–

"सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास आस्था और पूजा की स्वतंत्रता अवसरों और स्तर की समानता तथा व्यक्ति की गरिमा का आश्वासन देते हुए उन सब में भ्रातृभाव को बढ़ाना केवल शब्दों की सुन्दरता नहीं है अपितु संवैधानिक तंत्र के माध्यम से व्यवहार में लाने और अपनाने की आदर्श व्यवस्था है। साम्प्रदायिक भावनाओं का सरकार एवं प्रशासन दोनों द्वारा गैर कानूनी करार दिया गया है।

न्यायमूर्ति पी. बी. सांवत ने संविधान की प्रस्तावना के विषय में कहा–

"संविधान का मूल ढांचा प्रत्येक नागरिक को समान अवसर, समान स्तर और समान गरिमा का वायदा करता है। संविधान को इस कोण से देखने पर कम भाग्यशाली लोगों के लिए किए गए प्रतिपूरक उपाय और उपचार वस्तुत: समान अवसरों के सिद्धान्त का उल्लंघन नहीं करते क्योंकि हमारा समान 'सभी इन्सान एक समान है' के निरपेक्ष सिद्धान्त पर नहीं बना हुआ अपितु यह तो मानवीय तरीकों में निर्मित सामाजिक अन्तरों, अमीर और गरीब की वास्तविकता पर बना हुआ है।

न्यायमूर्ति बी. पी. जीवन रेड्डी ने एम. एच. कानिया, एम. एन. वैंकेटचलैया, ए. एच. अहमदी, और अपनी ओर से कहा था कि सभी नागरिकों को न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृभाव उपलब्ध करवाले का चौमुखी उद्देश्य उच्चकोटि के राजनेता को दर्शाता है जैसी हमारी देश ने कभी नहीं देखी थी क्योंकि कानून, राजनीति और जन जीवन से सम्बन्ध रखने वालों ने संविधान को परिवर्तन के साधन के रूप में निर्मित किया। संविधान निर्माता केवल संविधान का ढांचा निर्मित करके संतुष्ट नहीं बैठ गए थे अपितु उन्होंने प्रस्तावना में लक्ष्य को स्पष्ट किया और संविधान के भाग III और IV में उस लक्ष्य को प्राप्त करने का तरीका भी स्पष्ट किया। न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी ने संविधान में प्रयुक्त कुछ पदों व शब्दों का उद्गम को भी खोजा। 'स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा' शब्द फ्रांसीसी क्रान्ति का मुखर वाक्य था। यह हमारे संविधाान का भी आदर्श वाक्य है जिसमें आधुनिक राजनीतिक सोच के सार 'सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक न्याय' के सिद्धान्त को भी जोड; दिया गया है। समानता सदैव प्रत्येक मनुष्य की सबसे बड़ी मानवीय इच्छा रही है। इसने अनेक विचारकों और दार्शनिकों को प्रेरित किया है। यदि सभी धर्मों और राजनीतिक विचारधाराओं में बाद में जुड़ी विकृतियों और जड़ताओं को छोड़ कर देखा जाए तो विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतंत्रा में सभी मनुष्यों और विशेषत: इस देश में सदैव सबकी आस्था रही है और भारतीय सन्दर्भ में विशेषत: भाईचारे में सबकी आस्था रही है। एक गतिशील, बहुमुखी और निरन्तर विकासशील सिद्धान्त के रूप में 'समानता का अधिकार' का उद्देश्य अवसरों और स्थिति की समानता उपलब्ध करवाना है। लोगों की अपेक्षाओं के सार के रूप में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को संविधान के भाग IV में दर्ज किया गया है।

प्रस्तावना में संशोधनों पर चर्चा के दौरान 17 अक्टूबर 1949 को आचार्य जे. बी. कृपलानी ने भावनाओं से ओतप्रोत एक भावुक भाषण दिया। उसने कहा था कि संविधान सभा के अध्यक्ष ने एक अच्छे मेजबान की तरह सबसे अच्छी शराब सबसे अन्त के लिए आरक्षित कर छोड़ी है। संविधान के प्रारम्भ में रखे जाने वाली प्रस्तावना को विचार के लिए सबसे बाद में लिया गया है। उस पावन आवसर पर उसने सभा को स्मरण कराया कि:

"हमने इस प्रस्तावना में जो कुछ कहा है वह केवल कानूनी और राजनीतिक सिद्धान्त नहीं है। यह बहुत ही नैतिक ओर आध्यात्मिक सिद्धान्त है। वास्तव में यह कानूनी और संवैधानिक सिद्धान्त नहीं थे अपितु असल में अध्यात्मिक और नैतिक सिद्धान्त थे"

उसने आगे कहा

"लोकतन्त्र का अर्थ मनुष्यों के बीच समानता है और इसका अभिप्राय भ्रातृभाव और अहिंसा है। हिंसा लोकतन्त्र की शत्रु है।

उसने आगे जोड़ा

"यदि हम लोकतन्त्र को केवल कानूनी, संवैधानिक और औपचारिक शिक्षा की तरह प्रयोग करेंगे तो असफल रहेंगे। पूरे देश को लोकतन्त्र के नैतिक, आध्यात्मिक और चमत्कारिक प्रभाव को समझना चाहिए।

ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य कृपलानी कल ही यह बात कह रहे थे। संविधान की प्रस्तावना केवल कानूनी प्रारूप का कोई अंश अथवा मात्र औपचारिकता नहीं है। यह आचार संहिता है। इसे नैतिकता और व्यवहार में लाना चाहिए। यह गूढ़ता, रहस्यात्मकता व अध्यात्मवाद से भरा हुआ है। इसमें बजती हुई घण्टियों की लय और संदेश है। क्या हमारे पास इस संगीत को सुनने के लिए कान हैं? पढ़ने के लिए आंखें हैं और समझने के लिए दिल हैं?

पाठगत प्रश्न 18.4

1. संविधान की कार्यपद्धति में प्रस्तावना की भूमिका की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।
2. संविधान की प्रस्तावना देश के भाग्य निर्माण में एक प्रभावकारी भूमिका निभाती है "क्या यह कथन सही है या गलत? अपने विचार देकर स्पष्ट करें।

18.5 संविधान की व्याख्या करने में प्रस्तावना का महत्व

संविधान की व्याख्या करने में प्रस्तावना के महत्व का तीन पक्षों में अध्ययन किया जा सकता है-

(a) प्रस्तावना - संविधान की व्याखयाता के रूप में

(b) प्रस्तावना - संविधान के अन्तर्गत निर्मित अन्य विधियों (कानूनों की व्याख्या के स्रोत के रूप में)

(c) प्रस्तावना की व्याख्या में सहायक के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय प्रपत्र, सम्मेलन और घोषणाएं

(a) संविधान के व्याख्याकार के रूप में - प्रस्तावना

केशवानन्द भारती, चन्द्राभवन और धारवाड़ डिस्ट्रिक्ट पी. डब्ल्यू. डी. लिटरेट डेली वेज एम्पलाईज एसोसिएशन केस में सर्वोच्च न्यायालय की उद्घोषण के साथ यह स्पष्ट हो गया कि

टिप्पणी

मौलिक अधिकारों और राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्तों की परिधि, फैलाव और क्षेत्र को जानने के लिए प्रस्तावना को प्रयुक्त किया जा सकता है।

संविधान की प्रस्तावना हमें संविधान निर्माताओं के मस्तिष्क को खोल कर पढ़ने की चाबी प्रदान करती है क्योंकि संविधान सभा ने इसको बनाने में कड़ी मेहनत की थी ताकि यह संविधान की जरूरी विशेषताओं और आधारभूत उद्देश्यों को प्रतिदर्शित कर सके। प्रस्तावना संविधान का एक अंग है लेकिन प्रस्तावना को न तो किसी मूल शक्ति का स्रोत माना जा सकता है और न ही किसी प्रतिबन्ध अथवा सीमा का स्रोत माना जा सकता है। संविधान की प्रस्तावना को किसी संशोधन का अर्थ समझने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। केशवानन्द भारती और मिनर्वा मिल केस में न्यायाधीशों का बहुमत इस निर्णय पर पहुँचने के लिए प्रस्तावना पर निर्भर रहा कि अनुच्छेद 368 द्वारा दी गई संविधान संशोधन की शक्ति सीमित है और संसद को संविधान के मूल ढांचे को बदलने की शक्ति नहीं है।

एम्स स्टुडेन्ट्स यूनियन बनाम एम्स केस में संविधान के सिद्धान्तों द्वारा असमर्थित आरक्षण के भीतर आरक्षण को रद्द करते हुए न्यायालय ने संविधान की प्रस्तावना का उल्लेख किया। न्यायालय का मत था कि संविधान की प्रस्तावना में एक उद्देश्य 'हम भारत के लोगों' के बीच व्यक्ति की गरिमा एवं एकता और अखण्डता को आश्वस्त करते हुए आपसी भाईचारा बनाए रखना है।

संविधान निर्माताओं द्वारा दिया गया तथा भारत के लोगों द्वारा अपनाएं गए आरक्षण के अतिरिक्त-संविधान की रक्षा के बिना दिया गया आरक्षण आपसी भाईचारे, एकता और अखण्डता तथा व्यक्ति की गरिमा को कम करता है।

प्रस्तावना ही स्पष्ट करती है कि संविधान भारत के लोगों से प्राप्त सभी शक्तियों का स्रोत है और इन्हीं में अन्तिम शक्ति और ताकत निहित है। मुख्य न्यायाधीश आर. एस. पाठक ने केहर सिंह बनाम भारतीय संघ केस में संविधान पीठ की ओर से बोलते हुए कहा था कि भारत का संविधान आधुनिक संवैधानिक व्यवहार और देश के शासन को चलाने के मूल तत्वों के अनुरूप एक दस्तावेज है। भारत के लोगों ने कुछ निश्चित अंगों, संस्थाएं और अधिकारियों को संविधान द्वारा प्रदत शक्तियों को प्रयोग करने के एक संवैधानिक नीति प्रदान की है। सारी शक्तियां लोगों में निहित हैं और इन्हें एक संवैधानिक व्यवस्था चलाने बनाए रखने तथा कार्यन्वित करने के लिए सौंपा गया हैं इस बात को संविधान की प्रस्तावना में दर्ज किया गया है।

मुख्य न्यायाधीश एस. एस. सीकरी ने केशवानन्द भारती केस में निर्णय के दौरान संविधान की व्याख्या के बीच कहा था कि संविधान की पृष्ठभूमि में हमारा इतिहास है और इसकी व्याख्या हमें अपनी आशाओं, अपेक्षाओं और अन्य सम्बन्धित हालात के परिपेक्ष्य में करनी होगी। किसी भी अन्य संविधान के अन्तर्गत इतने विधिता पूर्ण लोग नहीं हैं जिनकी संख्या 55 करोड़ से अधिक है और सबकी अलग भाषाएं और धर्म हैं तथा वे आर्थिक विकास के अलग-अलग चरणों में है। सब मिलकर एक राष्ट्र बनाते हैं और किसी अन्य देश के सामने इतनी व्यापक सामाजिक-आर्थिक समस्यसाएं नहीं हैं। हमारे संविधान की व्याख्या किसी सामान्य कानून की तरह नहीं की जा सकती अपितु यह एक ऐसा संविधान है जो सरकार के लिए तंत्र निश्चित

करता है और जिसकी बड़ी व्यापक और महान दृष्टि है। इस दृष्टि को संविधान की प्रस्तावना में शब्दों से व्यक्त किया गया है और लोगों को मौलिक अधिकार प्रदान कर इसको कार्यान्वित किया गया है। इस दृष्टि को और अधिक सुचारू रूप से कार्यान्वित करने के लिए संविधान में दिए गए नीति निदेशक सिद्धान्त लागू किए गए। न्यायमूर्ति वच्छावट वेरूबारी यूनियन ने (Re Berubari Union) तथा न्यायमूर्ति वांचू से असहमति प्रकट करते हुए गोलकनाथ केस में कहा था कि प्रस्तावना संविधान का अंग नहीं है। केशवानन्द भारती केस में मुख्य न्यायधीश सीकरी ने कहा था कि प्रस्तावना संविधान का ही एक अंग है। प्रस्तावना को शक्ति का स्रोत न मानने के निर्णय को प्रतिबन्धों और सीमाओं तक विस्तार नहीं दिया जा सकता कुछ मामलों में सीमाओं को प्रस्तावना से व्युत्पन्न दर्शाने के लिए पर्याप्त अधिकार था। संविधान की प्रस्तवना किसी व्यर्थ के सिद्धान्त को निर्धारित नहीं करती। उसका निष्कर्ष था कि अनुच्छेद 368 में 'इस संविधान का संशोधन' में प्रस्तावना के व्यापक दायरे के अन्तर्गत संशोधन करना तथा प्रस्तावना एवं नीतिनिदेशक तत्वों के उध्देश्य को पूरा करना है।

मौलिक अधिकारों के बारे में इसका अर्थ था कि मौलिक अधिकार निरस्त नहीं किया जा सकता तो भी जनहित में इनका संक्षेपन किया जा सकता है। संविधान और प्रस्तावना के व्यापक दायरें में संशोधन की अवधारणा को व्यर्थ एवं असन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता जिसे हमारे सांसद और लोग समझ नहीं पाएंगे।

न्यायमूर्ति जे. एम. शील्ट और न्यायमूर्ति ए. एन. ग्रोवर ने केशवानन्द भारती मामले में संयुक्त विचार रखा था। उनके अनुसार संविधान की प्रस्तावना में संप्रभु, लोकतान्त्रिक गणतंत्र के लक्षण लिए अस्तित्व में आने वाले राज्य के कुल चरित्र से अलग महान उद्देश्यों, लक्ष्यों और प्रावधानों के अन्तर्गत नीतियाँ को समाहित किया गया है। भाग III और IV, जिनमें मौलिक अधिकार और नीति निदेशक तत्व शामिल हैं, संविधान की अन्तर्आत्मा है। यदि संशोधन शब्द के एक से अधिक अर्थ निकलते हों तो संविधान की योजना और इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ प्रस्तावना का सदा प्रयोग किया जाता रहा है और ऐसा करना स्वीकार्य भी रहा है। संविधान निर्माताओं ने प्रस्तावना को गौरवपूर्ण स्थान दिया है। इसमें वो सारे आदर्श और आपेक्षाएं शामिल हैं जिनके लिए देश ने अंग्रेजों के शासन काल में संघर्ष किया और भारतीय लोगों की प्रतिभा के अनुरूप इस संविधान को लागू किया जाना था। यह अन्य देशों के संविधानों से लिए गए विचारों और योजनाओं के योग को परिलक्षित करता है।

लेकिन संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद में निरन्तर चलने वाला तनाव प्रस्तावना में दिखाई देता है जिसे पावन और पुनीत बनाया जा सकता है। यह बात महत्वपूर्ण है कि प्रस्तावना को प्रारूप अनुच्छेदों में संविधान सभा द्वारा स्वीकृत सुधारों के साथ पारित किया गया। इसलिए प्रस्तावना में बहुत कम और सुपरिभाषित शब्दों को लिया जाना था जो संविधान को समझने के लिए जरूरी थें।

विद्वान न्याययधीशों ने संविधान सभा के अध्यक्ष द्वारा प्रस्तावना को सबसे अन्त में लिए जाने के स्पष्टीकरण पर ध्यान दिया। ऐसा इस दृष्टि से किया गया कि प्रस्तावना स्वीकृत संविधान के अनुरूप होनी चाहिए। संविधान के प्रारूप पाठ में सुझाए गए अनेक संशोधन अस्वीकार किए गए। अस्वीकार किया गया एक संशोधन था "भागवान के नाम पर" शब्दों को जोड़ना। इस

टिप्पणी

संशोधन को इस आधार पर अस्वीकार किया गया कि यह आस्था की स्वतंत्रता के साथ मेल नहीं खाता था जिसकी न केवल प्रस्तावना अपितु मौलिक अधिकारों में भी गारंटी दी गई थी। एक संशोधन जिसने सभी सन्देहों से परे यह स्पष्ट किया कि संप्रभुता का इसके अतिरिक्त कोई दूसरा अर्थ नहीं है कि संविधान लोगों से प्रकट हुआ है और इस संविधान को बनाने की संप्रभुता लोगों में ही निहित है।

न्यायमूर्ति खन्ना ने संविधान अथवा कानून की व्याख्या की दृष्टि से प्रस्तावना के दो उपयोग रेखांकित किए। पहला - यदि किसी कानून अथवा संविधान में कहीं कोई शब्द अस्पष्ट हो तो उसका अर्थ स्पष्ट करने के लिए प्रस्तावना का प्रयोग किया जा सकता है। दूसरा - प्रस्तावना को किसी संवैधानिक प्रावधान अथवा कानून की भाषा में किसी अस्पष्टता को दूर करने के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। जब किसी अनुच्छेद अथवा खण्ड की भाषा सरल और स्पष्ट हो तो प्रस्तावना का प्रयोग करके उस अनुच्छेद अथवा खण्ड पर कोई प्रकाश नहीं डाला जा सकता।

न्यायमूर्ति जगमोहन रेड्डी ने संविधान के स्रोत और उसके पीछे की ताकत पर बोलते हुए कहा था कि संविधान स्पष्ट शब्दों में कहता है कि भारत के लोगों ने ही इस संविधान को अंगीकार और लागू किया है और संविधान स्वयं को आत्मर्पित किया है। इसी कारण यह संविधान गत 23 वर्षों से बिना किसी प्रश्न चिन्ह के कार्य कर रहा है। संविधान के अन्तर्गत लोगों की इतनी बड़ी जनसंख्या साधारण चुनावों में संसद और विधान सभाओं के लिए अपने प्रतिनिधि चुनना इस बात को निर्विवाद बनाता है कि संविधान का स्रोत और वाध्यकारी ताकत भारत के लोगों की सप्रंभु इच्छा है। इसे विचार से संविधान संस्थापकों द्वारा प्रस्तावना को संविधान बनने के बाद निश्चित करना प्रस्तावना को इस तंत्र के आदर्शों एवं लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप बनाना था। प्रस्तावना संविधान के उन लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की घोषण करती है जिनको प्राप्त करने के लिए संविधान बनाया गया था।

यद्यपि जगमोहन रेड्डी के विचार में संविधान के व्याख्याकार के रूप में प्रस्तावना की उपयोगिता का विषय एक गम्भीर विषय है परन्तु न्यायविदों के विचारानुसार यह तो स्पष्ट है कि -

(a) प्रस्तावना, निर्माताओं के दिमाग को उन शरारतों के प्रति खोलने की कुंजी है जिनका उपचार किया जाना है।

(b) यदि संविधान के कार्यान्वयन में किसी शब्द के प्रति अस्पष्टता अथवा सन्देह उत्पन्न हो तो प्रस्तावना का सहारा लिया जा सकता है।

(c) कुछ जगह भले ही शब्द स्पष्ट हों तब भी प्रत्यक्ष विसंगति को रोकने के लिए इसका प्रयोग किया जा सकता है।

(d) इस तरह से विश्वास किया जाना चाहिए कि संविधान निर्माताओं के इरादे को संविधान अथवा मूल कानून में अभिव्यक्ति मिली है।

टिप्पणी

(e) प्रस्तावना का कभी भी संविधान द्वारा प्रदत शक्तियों को बढ़ाने अथवा नयी शक्ति निर्मित करने और संविधान द्वारा ले ली गई शक्ति को वापस देने के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता। इसका वास्तवितक कार्य संविधान द्वारा दी गई शक्तियों की प्रकृति, विस्तार और प्रयोग को स्पष्ट करना है।

अमेरिकी अवधारणा है कि प्रस्तावना का प्रयोग संघीय शक्ति के स्रोत के रूप में नहीं किया जाना चाहिए अपितु प्रस्तावना का प्रयोग और महत्व संविधान में अन्तर्निहित आवश्यक सिद्धान्तों को सुनिश्चित करना है।

ब्रिटिश मामले दर्शाते हैं कि प्रस्तावना का प्रयोग विधायी इरादों को खोजने के माध्यम के रूप में किया जा सकता है। ब्रिटिश विचार का सार है कि -

(a) प्रस्तावना कभी भी क्रियान्वित किए शब्दों से अलग नहीं जा सकती।

(b) प्रस्तावना को क्रियान्वित किए गए शब्दों का अर्थ जानने के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता जब स्वयं प्रस्तावना का अर्थ ही संन्देह के घेरे में हो।

अन्य शक्तियों को दखने के बाद न्यायमूर्ति जगमोहन रेड्डी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जहां शब्द स्पष्ट हों अथवा अस्पष्ट ही क्यों न हो वहां इसका (प्रस्तावना) प्रयोग संविधान का ऐसा अर्थ निर्मित करने के लिए किया जा सकता है ताकि अर्थ हीनता अथवा मूर्खता से बचा सके। जब प्रस्तावना एक स्पष्ट और निश्चित अर्थ देती हो तो इसका प्रयोग क्रियान्वित किए गए शब्दों पर भारी पड़ेगा और यदि शब्दों के अर्थ अस्पष्ट अथवा अनेकार्थी हों तो ऐसे अर्थ को स्वीकार करना चाहिए जो प्रस्तावना के अनुकूल हो।

संवैधानिक प्रावधानों के व्याख्याकार के रूप में प्रस्तावना की उपयोगिता पर चर्चा करते हुए न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ ने इस तर्क को निरस्त किया कि प्रस्तावना को संशोधनों पर सीमाएं लागू करने अथवा उन्मुक्ति प्रदान करने के रूप में लिया जाना चाहिए।

उसका निष्कर्ष था कि संविधान का प्रत्येक भाग और प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 368 द्वारा दी गई संशोधन की शक्ति के व्यापक क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। संशोधन की शक्ति पर कोई अन्तर्निहित पाबन्दी अथवा सीमा लागू नहीं की जा सकती जिससे संविधान की अनिवार्य विशेषताओं अथवा मूल सिद्धान्तों को संशोधन की शक्ति से बाहर रखने का सिद्धान्त निर्मित होता हो।

संविधान के अन्तर्गत बनाए गए अन्य कानूनों के व्याख्या कार के रूप में प्रस्तावना जब कभी संविधान की व्याख्या करनी हो अथवा कानून की वैद्यता पर विचार करना हो तो आधारभूत नियम यह है कि प्रस्तावना को मार्ग दर्शक के रूप में देखा जाना चाहिए और राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्तों को संविधान की व्याख्या के लिए प्रयोग करना चाहिए। प्रस्तवावना में लोगों की आशाओं और अपेक्षाओं का समावेश है। नीति निदेशक सिद्धान्त आसन्न लक्ष्य निर्धारित करते हे।। जब हम संविधान बनाम कानूनों का परीक्षण करते हैं तो हमें दूर दृष्टि अथवा निकट दृष्टि के लिए इन साधनों का प्रयोग करना चाहिए। जब संवैधानिक मामले विचारधीन हों तो व्याख्या के संकुचित नियमों को विधायी कार्यों की व्याख्या के लिए प्रासंगिक होते हुए भी प्रयोग नहीं

टिप्पणी

करना चाहिए। मूल रूप से संविधान की प्रस्तावना भारत के लोगों के भारत को संप्रभु लोकतान्त्रिक गणतन्त्र बनाने के निश्चय की घोषणा करता है और फ्रांस के घोषणा पत्र में उल्लिखित मनुष्य के अधिकारों "न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे को लोगों की आशाओं और अपेक्षाओं के रूप में सामने रखा। ऐसा 1950 में हुआ जब हम औपनिवेशिक-सामन्ती शासन से मुक्त हुयी थे। समय गुजरा, लोगों की आशाएं और अपेक्षाएं बढ़ीं। 1977 में 42वें संशोधन ने भारत को समाजवादी गणतन्त्र घोषित किया। 'समाजवादी' शब्द हो संविधान की प्रस्तावना में जोड़ा गया था। इस 'समाजवादी' शब्द को जोड़ने का परिणाम यह हुआ कि यह शब्द लोगों की आशाओं और अपेक्षाओं का केन्द्र बन गया, तथा सामन्ती शोषित समाज के स्थान पर सक्रिय समाजवादी कल्याणकारी समाज स्थापित करने के लिए संविधान के सभी अनुच्छेदों के लिए प्रेरक तथा मार्ग दर्शक बन गया। संविधान के किसी भी अनुच्छेद की व्याख्या अथवा किसी भी कानून की वैधता पर प्रश्न उठाने के लिए हमें ऐसी व्याख्या करने का प्रयास करना चहिए जो समाजवादी लोकतान्त्रिक राज्य की दिशा में कदम बढ़ाने वाली हो। उदाहरण के लिए जब हम किसी कानून द्वारा संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघन पर विचार करें तो हमे इस बात का अवश्य ध्यान रखन चाहिए कि सम्भवत: विधायिका द्वारा किया गया वर्गीकरण प्रस्तावना में निश्चित किए गए सामाजिक लक्ष्यों और संविधान के भाग IV में दर्ज नीति निदेशक सिद्धान्तों से मेल रखता हो। संविधान से मेल न रखने वाले वर्गीकरण जैसे अनुचित वर्गीकरण की अनुमति नहीं दी जा सकती।

संविधान की प्रस्तावना अन्य कानूनों की व्याख्या के लिए प्रासंगिक एवं महत्वर्पू है। केशवानन्द भारती केस से प्रस्तावना अन्य कानूनों की व्याख्या के लिए मार्गदर्शक एवं प्रकाश स्तम्भ के रूप में मान्य है।

केल्सन के अनुसार प्रस्तावना संविधान को अधिक गरिमा और प्रभावकारिता प्रदान करती है। शुरू में न्यायालयय प्रस्तावना का प्रयोग सामाजिक कानूनों की व्याख्या के लिए करते थे और बाद में इसका दायरा विस्तृत हो गया।

कोलुतबरा एक्सपोर्ट्स लि. बनाम केरल राज्य केस में केरल फिशरमैन वेलफेयर फंड 1985 की वैधता को इस आधार पर स्वीकार किया गया कि कानून का उद्देश्य केरल के मछुआरों को सामाजिक सुरक्षा और कल्याण प्रदान करना था तथा यह प्रस्तावना में निहित उद्देश्यों के अनुरूप था।

सर्वोच्च न्यायाल ने प्रस्तावना में निहित समानता के सिद्धान्त को भी टैक्स कानूनों की व्याख्या के लिए प्रयुक्त किया। श्री श्रीनिवास थियेटर बनाम तमिलनाड् सरकार केस में न्यायालय ने कहा कि टैक्स कानूनों में सरकार को व्यापक स्वतंत्रता दी गई है कि वह निर्णय कर सके कि प्रस्तवाना में परिकल्पित समानता के लक्ष्य के अनुरूप असमानता को हटाने के लिए किन्हें अधिक टैक्स देना चाहिए।

सरकार अभी हाल में पी. रामाचन्द्र राव बनाम कर्नाटक सरकार केस में न्यायालय ने तेजी से मुकद्मा चलाने की कार्यवाही को अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत मौलिक अधिकार माना और इस अधिकार को मतबूती देने के लिए संविधान की प्रस्तावना में दर्ज 'न्याय' के सिद्धान्त का प्रयोग किया।

श्रम और कम्पनी कानूनों के क्षेत्र में नेशनल टेक्सटाइल वर्कर्स यूनियन बनाम पी. आर. राकृष्णनन् केस में न्यायालय ने अधिकार का प्रयोग करके एक कम्पनी के मजदूरों को किसी याचिका को समेटने की सुनवाई करने का अधिकार दिया।

रणधीर सिंह बनाम भारत संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तावना के प्रकाश में अनुच्छेद 14 और 16 तथा संविधान के अनुच्देद 39(d) को संदर्भ बनाया।

डी. एस. नकडा बनाम भारत संघ केस में न्यायलय की टिप्पणी थी कि संविधान की प्रस्तावना वह प्रकाश पुंज है जो राज्य द्वारा एक संप्रभु, समाजवादी, पंथ निरपेक्ष, लोकतान्त्रिक गणराज्य स्थापित करने के मार्ग को प्रकाशित करती है और केश का फैसला पेन्शनर्स के हक में किया जिन्हें केन्द्र सरकार के एक आदेश में अन्तर्गत पेन्शन के बढ़े हुए लाभ को देने से इन्कार कर दिया था।

संजीव राय बनाम राजस्थान सरकार केस में न्यायालय का कहना था कि जब किसी व्यक्ति से सरकार द्वारा निश्चित न्यूनतम वेतन से कम पर बलात काम करवाया जाए तो वह अनुच्छेद 23 के अन्तर्गत बलात श्रम कहलाता है और आधारभूत रूप से प्रस्तावना में दर्ज सिद्धान्तों के विपरीत है।

संजीव कोक मै. कम्पनी बनाम भारत कोकिंग कोल लि. केस में न्यायालय ने कोकिंग कोल माइन्स (राष्ट्रीकरण) अधिनियम 1972 की वैधता को बरकरार रखने के लिए प्रस्तावना और अनुच्छेद 39(b) का सहारा लिया और टिप्पणी की कि अधिनियम को सबके लिए सामाजिक और अर्थिक न्याय के समतावादी सिद्धान्त को प्राप्त करने के लिए बनाया गया था।

"न्याय के पलड़ो को केवल प्रतिद्वन्द्वी सामाजिक और आर्थिक कारकों को तोलने के लिए ही नहीं बनाया गया। ऐसे मामलों में विधायी विवेक बना रहना चाहिए। और न्यायियक पुनरावलोकन लुप्त हो जाना चाहिए।

(c) प्रस्तावना की व्याख्या के लिए सहायक के रूप अन्तर्राष्ट्रीय प्रपत्र/सन्धियां सम्मेलन/घोषणाएं

भारत के न्यायाधीशों ने किसी मुद्दे पर कानून अथवा शक्ति की अनुपस्थिति में अन्तर्राष्ट्रीय कानूनी प्रपत्रों और संन्धियों का प्रयोग किया है। मधु किशवार बनाम बिहार राज्य मामले में न्यायालय ने कानूनी विवाद के चलते एक कबीलाई महिला के उत्तराधिकार को वैध ठहराने के लिए महिलाओं के विरूद्ध हर प्रकार के भेदभाव को मिटाने के लिए हुई वियना कन्वेशन का प्रयोग किया जिसे 18 दिसम्बर 1979 को संयुक्त राष्ट्र की स्वीकृति मिली थी। प्रस्तावना में व्यक्त न्याय और समानता के सिद्धान्त को सर्वोच्च न्यायालय की इस टिप्पणी ने नया आयाम दिया कि CEDAW (महिमालओं के विरूद्ध हर प्रकार के भेदभाव का पूर्ण उन्मूलन) का अनुच्छेद 2(3) सर्वोच्च न्यायालय के साथ मिलकर संविधान की सूखी हड्डियों में सांस फूंकने का काम करता है। लिंग आधारित भेदभाव को रोकने तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के सशक्तीकरण सहित जीवन के अधिकार को प्रभावकारी बनाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय

सम्मेलनों तथा घोषणाओं का प्रयोग किया। महिलाएं सबसे निम्नतम् का आधा भाग है। महिलाओं की गरिमा को सुनिश्चित करने तथा उन्हें राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा में लाने के लिए सामाजिक-आर्थिक न्याय देना आवश्यक है। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तावना में प्रयुक्त न्याय और समानता से उत्प्रेरित लैंगिक न्याय की खोज में CEDAW के आधार पर कार्यस्थलों पर होने वाले यौन उत्पीड़न सम्बन्धित दिशा निर्देश तय किए। किर्लोस्कर ब्रदर्स लि. बनाम ई. एस. आई. कार्पोरेशन मामले में न्यायालय ने मानवधिकार के घोषणा पत्र 1948 और सामाजिक तथा राजनीतिक अधिकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय संधि का प्रयोग राज्य की कल्याणकारी भूमिका की पुष्टि हेतु किया।

पाठगत प्रश्न 18.5

1. संविधान के प्रावधानों की व्याख्या करने के रूप में प्रस्तावना की भूमिका का संक्षेप में विश्लेशण कीजिए।
2. "प्रस्तावना अन्य कानूनों की व्याख्या करने में सहायक के रूप में कार्य करती है" यह कथन सही है या गलत? व्याख्या कीजिए।
3. अन्तर्राष्ट्रीय प्रपत्र/सन्धियां/सम्मेलन/घोषणएं प्रस्तावना की व्याख्या करने में सहायक के रूप में कार्य करती हैं। यह कथन सत्य है या असत्य? स्पष्ट कीजिए।

आपने क्या सीखा

कानूनों और नियमों का वह दस्तावेज जो सरकार के रूप तथा नागरिकों और सरकार के बीच सम्बन्धों को निर्धारित एवं वर्णित करता है; संविधान कहलाता है। संक्षेप में संविधान में ऐसे कानून और सिद्धान्त होते हें जिसके अनुसार राज्य का शासन चलाया जाता है।

ऐसी सरकार, जिसे किसी संविधान द्वारा नियन्त्रित, शासित अथवा सीमित किया जाता है, संवैधानिक सरकार कहलाती है।

संविधानवाद का अर्थ है संवैधानिक सरकार अथवा संवैधानिक सिद्धान्तों में विश्वास। संविधानवाद एक संवैधानिक सरकार की स्थापना करता है जो लिखित संविधान द्वारा शासित अथवा नियन्त्रित होती है। संविधान की प्रस्तावना दो तरीकों से संविधान के उद्देश्यों को स्पष्ट करती है। पहला तो शासन के तन्त्र के बारे में और दूसरा भारत द्वारा प्राप्त किए जाने वाले आदर्शों के बारे में। इसी कारण प्रस्तावना में व्यक्त उद्देश्यों में संविधान का आधारभूत ढांचा निहित है।

प्रस्तावना संविधान एवं इसके अन्तर्गत निर्मित अन्य कानूनों के व्याख्याकार के रूप में कार्य करती है। संविधान की प्रस्तावना ने विगत छः दशकों के दौरान देश का भाग्य या तकदीर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

पाठांत प्रश्न

1. संविधान का अर्थ क्या है?
2. किसी संवैधानिक सरकार की विशेषताओं का संक्षेप में परीक्षणा कीजिए।
3. संविधानवाद का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. संविधान की व्याख्या में प्रस्तावना की भूमिका का परिक्षण कीजिए।
5. संविधान के अन्तर्गत बने अन्य कानूनों की व्याख्या में एक सहायक के रूप में प्रस्तावना की भूमिका पर संक्षेप में चर्चा कीजिए।
6. "प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग है" कुछ प्रासंगिक वाद (केस) देकर इस कथन का परीक्षण कीजिए।
7. अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में एक राष्ट्र के रूप में हमें गरिमा प्रदान करने वाले, प्रस्तावना में उल्लिखित संवैधानिक मूल्यों की संक्षेप में व्याख्या किजिए।

पाठगत प्रश्न के उत्तर

18.1

1. संविधान में ऐसे कानून और सिद्धान्त होते हैं जिनके अनुसार किसी राज्य का शासन चलाया जाता है। किसी देश का संविधान देश के शासन हेतु आधार प्रदान करता है।
2. संविधानवाद का अर्थ है संवैधानिक सरकार अथवा संवैधानिक सिद्धान्तों में विश्वास होना। संविधानवाद एक ऐसी सरकार की स्थापना करता है जिसको एक लिखित संविधान नियन्त्रित करता है।

18.2

1. आधारभूत ढांचा
2. उद्देश्य
3. संविधान की सत्ता का स्त्रोत।

18.3

1. केशवानन्द भारती वाद (केस)
2. बेरूबारी वाद (केस)
3. केशवानन्द भारती वाद (केस)

टिप्पणी

18.4

1. 18.4 को देखिये
2. सत्य

18.5

1. 18.5 (a) को देखिये
2. सत्य
3. सत्य